डॉ. राममनोहर लोहिया

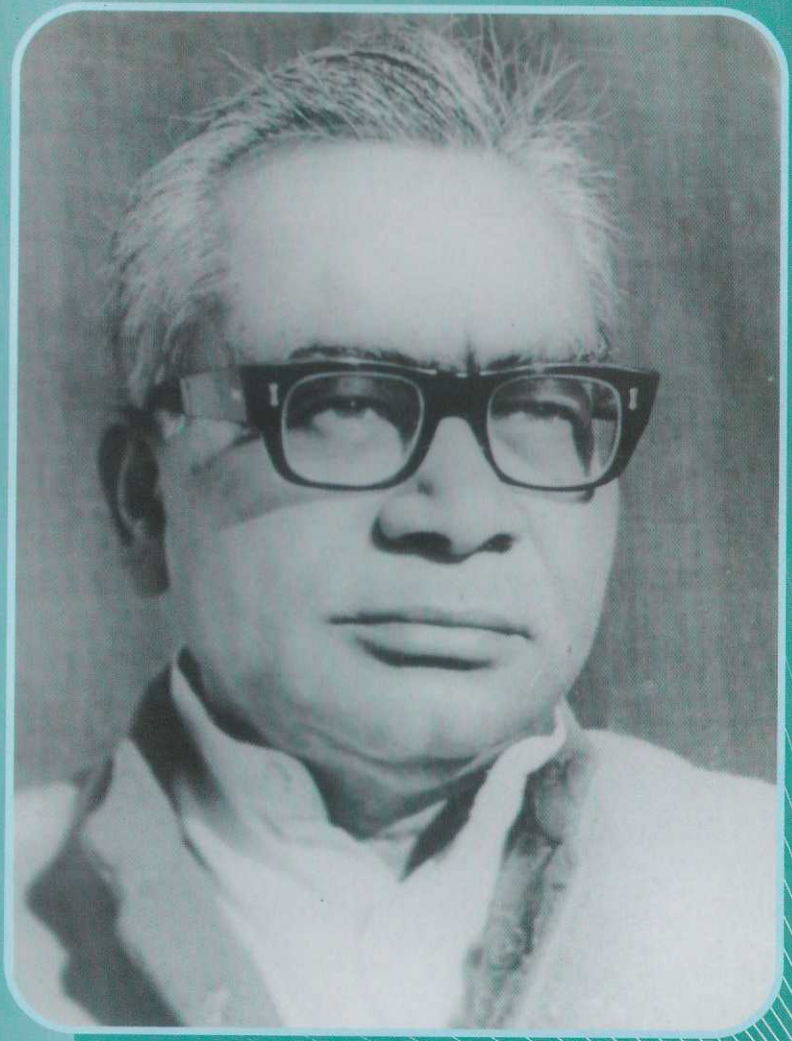

गोपाल शरण गर्ग

डॉ. राममनोहर लोहिया

गोपाल शरण गर्ग
(राष्ट्रीय महामंत्री)

श्री अग्रसेन फाउंडेशन

प्रकाशक :
श्री अग्रसेन फाउंडेशन
83, मॉडल बस्ती, करोल बाग, नई दिल्ली-110005
दूरभाष : 011-23633333, 23510630
E-mail : agroha@gmail.com
Website : www.allagrawal.org

डॉ. राममनोहर लोहिया

ISBN : 978-81-929878-6-6

मूल्य : ₹ 40/-
© : प्रकाशक
प्रथम संस्करण : 2015
शब्द-संयोजन
एवं आवरण : आधुनिक जनसंचार प्रा.लि. / 97180 67709
मुद्रक : आधुनिक जनसंचार प्रा.लि. / 011-27103051

Dr. Rammanohar Lohia *by* Gopal Saran Garg

डॉ. राममनोहर लोहिया

डॉ. राममनोहर लोहिया देश में समाजवादी विचारधारा के सबसे बड़े पैरोकार का नाम ही नहीं है। यह सिद्धांतों की राजनीति करनेवाले, नैतिकता का दृढ़तापूर्वक पालन करनेवाले और सिर्फ देशहित में सोचनेवाले शख्स का नाम है। डॉ. राममनोहर लोहिया अत्यंत धैर्यवान, कष्ट सहने की क्षमतावाले और सच के लिए अड़नेवाले नेता का नाम है।

डॉ. राममनोहर लोहिया का जन्म 23 मार्च, 1910 को उत्तर प्रदेश के फैजाबाद जिले के अकबरपुर तहसील में एक अग्रवाल मारवाड़ी परिवार में हुआ था। उनके पिता श्री हीरालाल लोहिया गांधीजी के परम भक्तों में से थे। वे व्यवसायी तो थे, पर कोई भी व्यवसाय व्यस्थित रूप से नहीं चला पाते थे। कभी एक जगह स्थिर होकर रह भी नहीं सके। कोई व्यवसाय कहीं जमाया कि इसी बीच जेल चले गये। फिर छूटे तो जो काम शुरू था, वह सबका सब अस्त-व्यस्त और खत्म हो गया। कभी मुम्बई तो कभी कलकत्ता, कभी अकबरपुर में ही रहकर थोड़ा बहुत व्यापार कर लेते थे। डॉ. लोहिया की माता का नाम चन्द्री देवी था। वह लगभग ढाई वर्ष के थे कि माता का स्वर्गवास हो गया। उनका पालन पोषण उनकी दादी ने किया। बचपन से ही अपने पिताजी के साथ ही रहे और

उनके जीवन से ही उन्हें राष्ट्र-प्रेम की प्रेरणा मिली। गांधीजी से वह छोटी उम्र में ही मिल चुके थे। गांधीजी के व्यक्तित्व की गहरी छाप उनके मन-मानस पर पड़ी थी। जवाहर लाल नेहरू अकबरपुर आये थे तो हीरालालजी के यहां ही ठहरे थे। बाद में जब वह राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लेने लगे तब जवाहरलाल नेहरू से काफी प्रभावित हुए।

रुचियां व स्वभाव

पढ़ने में बहुत रुचि थी। पढ़ने के लिए वह रोज समय निकालते। प्राचीन आधुनिक साहित्य, राजनीति, दर्शन, अर्थशास्त्र व इतिहास की ही नहीं, अजीबोगरीब किताबें भी पढ़ते। रामायण के प्रेमी थे। महाभारत स्थापत्य कला व नक्षत्र मंडल में गहरी रुचि थी। वेशभूषा और खानपान में बहुत सरल। पहनावा— धोती, कुर्ता, सदरी व चप्पल, खाना शाकाहारी और सादा। अपने जीवन के कष्टों और त्याग का बखान नहीं करते थे।

बचपन में पढ़ाई से अधिक गेंद बल्ला, गुल्ली डंडा और कबड्डी खेलने में रुचि थी। पर कक्षा में प्रथम आते थे। बाद में वह प्रश्नों का उत्तर लिखते समय अपने विचार भी उसमें डाल देते। इस पर कापी जांचने वाला चकराता। यानि उन्हें अच्छे अंक नहीं मिलते।

वह कोर्स की किताब खुद नहीं पढ़ते थे। सहपाठी से कहते, पाठ को जोर से पढ़ो। वह लेट कर उसे सुनते और परीक्षा पास करने को उनके लिए इतना काफी था। वह स्वभाव के बहुत उदार थे। जब तक जेब में पैसे रहते, दोस्तों पर खर्च करते रहते थे। उन्हें चाट और गोलगप्पे खाने का बहुत शौक था। फिल्में भी खूब देखते थे। हालांकि तब फिल्में मूक ही थीं। बहुत जिद्दी थे। पढ़ने की जिद, तर्कों के साथ बहस करने, भाषण देने की जिद। सुबह उठना और कसरत करना नापंसद था, हां स्वस्थ रहने के लिए घूमना, तैरना, नौकायन पसंद था।

जब डॉ. लोहिया आगरा जेल में थे तो उनके पिता की मृत्यु हो गयी पर उन्होंने इस आधार पर पैरोल नहीं ली।

शिक्षा देश-विदेश में

अकबरपुर में प्राथमिक पढ़ाई खत्म करने के बाद वह अपने पिता के साथ मुम्बई चले गये। सन् 1920 में मारवाड़ी विद्यालय मुम्बई से उन्होंने मैट्रिक परीक्षा पास की। इण्टर की परीक्षा उन्होंने वाराणसी में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से दी।

सन् 1925 में वह अपने पिता के साथ कलकत्ता आ गये। विद्यासागर कॉलेज में नाम लिखाया और सन् 1929 में बी.ए. आनर्स की डिग्री परीक्षा

प्रथम श्रेणी में पास की। बी.ए. में ही डॉ. लोहिया ने एक लेख लिखा था 'इन डिफेन्स ऑफ ब्रूटस्'। उस प्रभावशाली लेख से डॉ. लोहिया ने कॉलेज में अपनी विद्वता की धाक जमा ली थी। सन् 1928-29 में बी.ए. में पढ़ने के साथ-साथ डॉ. लोहिया भारतीय राजनीति में भी सक्रिय भाग लेने लगे थे। सन् 1928 में भारत में अंग्रेजी शासन ने साइमन कमीशन भेजा। पूरे देश में साइमन कमीशन के विरोध में बड़ी तेजी से आंदोलन चल पड़ा। डॉ. लोहिया ने इस आंदोलन में सक्रिय भाग लिया।

सन् 1928 में अखिल बंग विद्यार्थी संगठन का वार्षिक आयोजन था। पं. जवाहरलाल नेहरू उस सम्मेलन के अध्यक्ष चुने गये। सुभाष चंद्र बोस विषय समिति के अध्यक्ष थे। इस सम्मेलन में डॉ. लोहिया ने इतना ओजस्वी भाषण दिया कि तमाम बंगाली विद्यार्थी उनके भक्त हो गये। स्वयं जवाहरलाल नेहरू डॉ. लोहिया के भाषण से इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने डॉ. लोहिया की पीठ थपथपाई। डॉ. लोहिया को न अंग्रेज पसंद थे, न अंग्रेजी पहनावा और न अंग्रेजी भाषा। इसलिए 1929 में उच्च शिक्षा के लिए इंग्लैण्ड जाने पर कुछ महीनों में ही उनका दम घुटने लगा। उन्होंने जर्मनी जाने का फैसला किया।

प्रथम विश्वयुद्ध के बाद जर्मनी का पूरा आर्थिक तंत्र ढह चुका था। बाजार की मंदी और आर्थिक अनिश्चितता के कारण जर्मनी में बहुत बड़े पैमाने पर बेरोजगारी फैल गयी थी। राजनीतिक पार्टियां खुलेआम एक-दूसरे से लड़-झगड़ रही थीं। शांति का कोई विकल्प नहीं दिखता था। लोग हिटलर की

बातों को बहुत ध्यान से सुनते थे। उनके शोध निर्देशक डॉ. वर्नर जोम्बर्ट अंग्रेजी नहीं जानते थे इसलिए डॉ. लोहिया ने तीन महीने में जर्मन भाषा लिखना, पढ़ना, बोलना सीख ली और 'नमक सत्याग्रह' पर शोध शुरू कर दिया। असल में तब गांधीजी का नमक सत्याग्रह दुनियाभर में चर्चा का विषय था। 1932 में उन्हें डॉक्ट्रेट की उपाधि मिल गयी। 1929 से 1933 तक अपने जर्मनी प्रवास के दौरान डॉ. लोहिया ने 'मध्य यूरोपीय संघ' नामक एक संगठन बनाया और एक प्रस्ताव पास करके कांग्रेस के करांची अधिवेशन में भेजा। इससे जवाहरलाल नेहरू बहुत प्रभावित हुए।

सन् 1930 में जेनेवा में 'लीग ऑफ नेशन्स' की बैठक हो रही थी। हिन्दुस्तान की अंग्रेजी सरकार के प्रतिनिधि बीकानेर के महाराजा थे। डॉ. लोहिया ने ठान ली थी कि वह 'लीग ऑफ नेशन्स' की इस बैठक में प्रदर्शन करेंगे। उन्होंने किसी तरह कुछ प्रवेश-पत्र प्राप्त कर लिए। वह अपने दो मित्रों के साथ हाल की गैलरी में जा बैठे। जब महाराजा बीकानेर ने खड़े होकर अंग्रेजी में भाषण शुरू किया तो लोहिया ने गैलरी में बैठे-बैठे इतने जोर की सीटी बजाई की सारा हाल सन्नाटे में आ गया। सभा अध्यक्ष ने डॉ. लोहिया और उनके साथियों को हाल से बाहर निकाल देने की आज्ञा दी।

दूसरे दिन डॉ. लोहिया ने अपने इस कार्य के बारे में अपना स्पष्टीकरण लिखकर जेनेवा के सारे अखबारों में छापने के लिए दिया। बयान में भारत की स्थिति का तथ्यपरक वर्णन था। उनका बयान केवल एक अखबार 'लू त्रावे ह्यूमेनाइट' ने छापा। डॉ. लोहिया ने उस छपे बयान की प्रतियों को काफी संख्या में खरीद लिया। उसे हाल के बाहर खड़े होकर सारे प्रतिनिधियों के बीच बांटा। उनके बयान में भारत में अंग्रेजों द्वारा किये जाने वाले अत्याचारों का विस्तार के साथ वर्णन था। भारत में फैली अशान्ति का वर्णन था।

डॉ. लोहिया में प्रारम्भ से ही अदम्य साहस और निर्भीकता थी। विद्यार्थी जीवन में मुम्बई के मारवाड़ी महाविद्यालय में महान राष्ट्रभक्त लोकमान्य तिलक के निधन पर स्कूल बंद करवाने में उन्होंने अपनी छोटी आयु में जो साहस दर्शाया था उससे उनके गुरुजन भी प्रभावित थे। अपने चिन्तन के कारण डॉ. लोहिया जर्मनी के कम्युनिस्टों और नाजियों दोनों के बीच लोकप्रिय थे। डॉ. लोहिया ने जर्मनी में हिटलर के भी कई भाषण सुने थे। उस समय कम्युनिस्ट पार्टी और नाजी पार्टी के अतिरिक्त सोशल डेमोक्रेटिक नाम की भी एक पार्टी जर्मनी में थी। डॉ. लोहिया इन तीनों पार्टियों में आते-जाते थे। पर जब कभी सदस्यता की बात आती तो साफ इनकार कर देते थे।

फिर भी एक बार नाजी नेता परीले शेल्कर को लगा कि डॉ. लोहिया हिटलर के भाषण से बहुत प्रभावित हैं। लेकिन जब उन्होंने डॉ. लोहिया से भारत में नाजीवाद के प्रचार की सम्भावना पर बात की तो डॉ. लोहिया ने दो टूक शब्दों में कहा कि तुम्हारा सोचने का तरीका तो आदमी को जाति में बांटना तथा वंश की श्रेष्ठता को प्रमुख बनाना है। इसलिए तुम कभी मानव मात्र, विश्वमानव या विश्वबन्धुत्व की बात सोच ही नहीं सकते। तुम लोग अपने को नस्ल के आधार पर सर्वश्रेष्ठ मानते हो और हिन्दुस्तान और काले रंग वाले लोगों को निकृष्टतम मानते हो। आदमी-आदमी के बीच यह बंटवारा भारतीय चिन्तन के विपरीत है। हम भारतीय तो 'विश्वबन्धुत्व' में विश्वास करने वाले हैं। हमारा तुम्हारा साथ नहीं हो सकता। डॉ. लोहिया की स्पष्ट बात से परीले बड़ा प्रसन्न हुआ। डॉ. लोहिया को कट्टर राष्ट्र स्वाभिमानी समझकर वह उनसे हमेशा बड़ा स्नेह दिखाता रहा।

अन्याय के खिलाफ

अन्याय के प्रति अकेले खड़े होने का साहस डॉ. लोहिया में बचपन से ही था। तब वह अकबरपुर के मदरसे में पढ़ते थे। एक दिन जब वह अपने

स्कूल पढ़ने जा रहे थे तो उन्होंने देखा कि रास्ते में एक व्यक्ति एक छोटे से बच्चे को बड़ी बेरहमी के साथ पीट रहा था। डॉ. लोहिया से यह बर्दाश्त नहीं हुआ। उन्होंने अपने से तिगुनी उम्र वाले का हाथ पकड़ लिया। उस व्यक्ति को बच्चे को पीटना बन्द करना पड़ा। बाद में लोगों ने डॉ. लोहिया से पूछा, ''वह अपराधी संस्कारों वाला आदमी तुम्हें पीटना शुरू कर देता तो तुम क्या करते।'' डॉ. लोहिया ने कहा, ''तब की तब देखी जाती। उस समय तो उसको रोकना ही जरूरी था।''

नैतिक दृढ़ता

नैतिक चरित्र भी डॉ. लोहिया में बहुत ही दृढ़ था। एक बार जर्मनी में अपने कुछ साथियों के साथ मोटर ड्राइव करके वे किसी गांव की तरफ जा रहे थे। रास्ते में एक गांव वाले की गाड़ी से उनकी गाड़ी टकरा गयी। डॉ. लोहिया ने इस दुर्घटना के लिए उस ग्रामीण जर्मन से क्षमा मांगी लेकिन उस गांव वाले ने उनकी बात अनसुनी कर दी। बोला, ''मैं तुम्हें पुलिस को दूंगा।'' वह यह कहकर जब पुलिस को बुलाने जाने लगा तो उनसे बोला, ''भागना नहीं यहीं खड़े रहना।'' डॉ. लोहिया ने कहा, ''तुम पुलिस बुला

लाओ। मैं यहां आधे घंटे तक खड़ा रहूंगा।'' गांव वाला चला गया तो डॉ. लोहिया के दोस्तों ने कहा चलो यहां से भाग चलें। उन्होंने मित्रों की बात नहीं मानी और वह आधे घंटे तक वहीं खड़े रहे। जब आधे घंटे का भी समय बीत गया तो मित्रों ने कहा अब तो चलो। डॉ. लोहिया ने कहा, ''मैं पांच मिनट और रुकूंगा।'' पांच मिनट बाद वह ग्रामीण खाली हाथ आया। उसके साथ पुलिस वाला नहीं था। पहुंचते ही वह ग्रामीण बोला, ''तुम गये नहीं। मैं सोचता था कि तुम अब तक भाग गये होगे।'' डॉ. लोहिया ने कहा, ''मैंने तुम्हें आधे घंटे का समय दिया था। फिर मेरे भागने का सवाल कहां था?'' वह गांव वाला उनको चकित दृष्टि से काफी देर तक घूरता रहा। फिर बोला, ''अजीब हालात हैं, पुलिस वाले रपट भी नहीं लिखते।'' डॉ. लोहिया ने कहा, ''तुम्हारे ही देश की पुलिस ऐसी नहीं है। हर जगह की पुलिस ऐसी ही होती है।'' गांव वाला डॉ. लोहिया की बात से बड़ा प्रसन्न हुआ और बोला, ''तुम जाओ। तुमसे मुझे कोई शिकायत नहीं है।''

डॉ. लोहिया को अपनी गलतियों का अहसास होने पर क्षमा मांगने में तनिक भी संकोच नहीं होता था। बहुत से लोग डॉ. लोहिया को बड़ा जिद्दी व्यक्ति मानते थे। लेकिन डॉ. लोहिया जिद्दी नहीं थे। वह हर प्रकार के अन्याय के विरुद्ध संघर्ष करने वाले तेजस्वी व्यक्ति थे।

रंग-भेद का विरोध

अमरीका में उन्होंने रंग-भेद के विरुद्ध संघर्ष किया। एक ऐसे होटल में जहां काले लोगों का प्रवेश निषिद्ध था, डॉ. लोहिया ने कुछ मित्रों के साथ प्रवेश किया और होटल मैनेजर से कहा कि मैं इस अमानुषिक कानून को जानबूझकर और पूरे होशोहवास में तोड़ रहा हूं। पुलिस ने उन्हें बन्दी बना लिया। बाद में वह छोड़ दिये गये।

भारत वापसी और राजनीतिक सक्रियता

सन् 1933 में जब डॉ. लोहिया भारत आये तो कॉलेज या यूनिवर्सिटी में प्रोफेसरी करने के बजाय गांधीजी के पास गये। वह पानी के जहाज से मद्रास उतरे। मद्रास से कलकत्ता जाने का किराया भी उनके पास नहीं था। डॉ. लोहिया सीधे अंग्रेजी पत्रिका 'हिन्दू' के कार्यालय पहुंचे। सम्पादक को अपनी कठिनाई बताई। उसने उनसे एक लेख लिखने के लिए कहा। डॉ. लोहिया ने वहीं उसी कार्यालय में बैठकर एक लेख लिख दिया। लेख के पारिश्रमिक के रूप में उन्हें 25 रुपये मिले तो वह कलकत्ता पहुंचे। वहां पहुंचने पर पता चला कि उनके पिता चार सौ सत्याग्रहियों के साथ प्रेजिडेन्सी

जेल में कैद हैं। जवाहर लाल नेहरू भी नजरबंद किये जा चुके थे।

खान अब्दुल गफ्फार खां को अंग्रेजों ने कैद करके बर्मा की जेल में भेज दिया था। देश में हर जगह धर-पकड़ हो रही थी। डॉ. लोहिया को कुछ समय देश की स्थिति समझने में लगा। डॉ. लोहिया अपने चाचा रामकुमार लोहिया से मिले। जब उनके चाचा ने उनको व्यापार करने की सलाह दी तो डॉ. लोहिया ने कहा, ''मुझे भारत से अंग्रेजों को निकाल बाहर करने का व्यापार करना है। मैं यही कर सकता हूं।'' चाचा उनकी बात से बहुत नाराज हुए। लेकिन डॉ. लोहिया पर उस नाराजगी का कोई प्रभाव नहीं पड़ा। आर्थिक विपन्नता में भी वह झुके नहीं। उन्होंने एक बार हिन्दू विश्वविद्यालय में प्रोफेसरी के लिए आवेदन किया। पर वहां अर्थशास्त्र विभाग में नियुक्तियां हो चुकी थीं। उद्योगपति बिड़लाजी ने उन्हें अपने व्यक्तिगत सचिव के रूप में रखने की इच्छा प्रकट की। कुछ दिनों डॉ. लोहिया बिड़लाजी के साथ रहे भी लेकिन उनसे उनकी पटी नहीं। जमनालाल बजाज डॉ. लोहिया को बेटे की तरह मानते थे। पर डॉ. लोहिया कुछ दिन ही उनके साथ रहे। फिर कलकत्ता चले गये। सन् 1933-34 यानी पूरा वर्ष भटकते बीता।

सन् 1934 में कांग्रेस के सिविल नाफरमानी आंदोलन की विफलता के

कारण देश के लोगों के मन में घोर निराशा छा गयी। नासिक जेल में कांग्रेस के कुछ लोग थे जो समाजवादी विचारों से प्रभावित थे। कुछ अन्य जेलों में भी ऐसे लोग थे। जब ये लोग जेल से छूटे तो इन्होंने एक समाजवादी संगठन बनाने का संकल्प लिया। 17 मई, 1934 को पटना में इन सबकी एक बैठक हुई। आचार्य नरेन्द्र देव ने इस बैठक की अध्यक्षता की। डॉ. लोहिया और जयप्रकाश नारायण भी इस सम्मेलन में थे। डॉ. लोहिया ने प्रस्ताव रखकर समाजवादी संगठन के लक्ष्य में सम्पूर्ण आजादी को भी जोड़ने की सलाह दी। आचार्य नरेन्द्र देव ने उनके इस प्रस्ताव का समर्थन किया। पर बहुमत ने पूर्ण स्वतंत्रता के उद्देश्य को इसमें जोड़ना उचित नहीं समझा। डॉ. लोहिया का संशोधन गिर गया, लेकिन इससे उनके साहस में कमी नहीं आई।

कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी का जन्म

21 अक्टूबर को मुम्बई में कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी की स्थापना का सम्मेलन हुआ। डॉ. लोहिया पार्टी की कार्यकारिणी के सदस्य चुने गये। यहीं 'कांग्रेस सोशलिस्ट' नाम की पत्रिका कलकत्ता से निकालने का निश्चय हुआ। डॉ. लोहिया उसके सम्पादक नियुक्त किये गये। डॉ. लोहिया की आय का कोई साधन नहीं था। ऊपर से 'कांग्रेस सोशलिस्ट' पत्रिका को सम्पादित करने और निकालने का दायित्व उन पर आ गया था। न तो उन दिनों डॉ. लोहिया के पास कपड़े थे और न सोने की जगह। खाना वह कभी किसी के यहां तो कभी किसी के यहां खा लेते थे। कुछ दिनों बाद वह कलकत्ता के मिर्जापुर सिटी मोहल्ले में किसी के साथ रहने लगे।

'कांग्रेस सोशलिस्ट' के जितने अंक डॉ. लोहिया ने निकाले, उनकी सबने प्रशंसा की। डॉ. लोहिया ने इस समाजवादी पत्र के माध्यम से पहली बार राजनीति और संस्कृति को एक साथ जोड़ने की कोशिश की। उत्साह और मिशन का भाव उनमें इतना तीव्र था कि वो खुद सड़क पर, चौराहे पर खड़े होकर कांग्रेस सोशलिस्ट पत्रिका बेचते थे। यह क्रम सन 1936 तक निर्बाध रूप से चलता रहा।

सन् 1936 में कांग्रेस का अधिवेशन लखनऊ में हुआ। जवाहरलाल नेहरू

इस सम्मेलन में अध्यक्ष चुने गये। अधिवेशन में कांग्रेस में विदेश नीति सम्बन्धी एक सेल बनाने का प्रस्ताव पारित हुआ। जवाहर लाल नहेरू ने डॉ. लोहिया को इस विभाग का मंत्री नियुक्त कर दिया। उन्हें कलकत्ता छोड़कर इलाहाबाद आना पड़ा।

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के कार्यालय 'आनंद भवन' में डॉ. लोहिया रहने लगे। कांग्रेस के विदेश नीति सेल में काम करते हुए उन्होंने अफ्रीका-एशियाई देशों की समस्याओं का विश्लेषण भी किया और उसे भारत की विदेश नीति का प्रमुख अंग भी बनाया। विदेशों के अनेक विदेशी मंत्रालयों से कांग्रेस का सीधा सम्बन्ध स्थापित हुआ। कांग्रेस के विदेश विभाग के मंत्री के रूप में ही डॉ. लोहिया ने 'हिमालय-नीति' की व्याख्या की थी। रूस और अमेरिका दोनों भारतीय संदर्भ में कितने अप्रासंगिक हैं इसकी व्याख्या उन्होंने प्रस्तुत की। नेहरू शुरू में इन विचारों से बहुत प्रभावित थे। लेकिन जवाहरलाल नेहरू ने आजाद भारत के विदेश मंत्री के रूप में जो विदेश-नीति प्रस्तुत की उससे लोहिया दुःखी थे। उनका कहना था

कि यह अमरीका और रूस को बारी-बारी से संतुष्ट करने वाली नीति है।

कम्युनिस्टों से मतभेद

डॉ. लोहिया ने कांग्रेस दल के विदेश विभाग के मंत्री के रूप में कम्युनिस्ट पार्टी की नीतियों और रूस की नीतियों का वृहद विश्लेषण किया था। पहले तो समाजवादी और कम्युनिस्टों में ज्यादा मतभेद नहीं था परंतु स्टालिन ने जब रूस में वैचारिक स्वतंत्रता का हनन और लोगों को प्रताड़ित करना शुरू किया तो बहुत से कम्युनिस्टों और समाजवादियों का विश्वास रूस और मार्क्सवाद से टूटने लगा। भारत में चूंकि कम्युनिस्ट पार्टी अभी भूमिगत थी इसलिए भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी की यह कोशिश थी कि कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी और भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी का विलय हो जाये पर इस एकता के प्रस्ताव को डॉ. लोहिया ने भारतीय समाजवाद के लिए घातक माना। उन दिनों जयप्रकाश जी डॉ. लोहिया से सहमत नहीं थे।

सन् 1939 में दूसरे विश्वयुद्ध की जब घोषणा हुई तो कम्युनिस्ट स्वतंत्रता आंदोलन से अलग हो गये। रूस के युद्ध में शामिल होने से कम्युनिस्ट पार्टी ने अंग्रेजों की मदद करना स्वीकार कर लिया। परिणाम स्वरूप कम्युनिस्ट पार्टी का भूमिगत जीवन समाप्त हो गया। वैधरूप में वह अब सामने आ गई। ऐसा होने से कम्युनिस्ट पार्टी स्वतः कांग्रेस पार्टी से अलग हो गई।

आजादी की लड़ाई

युद्ध की घोषणा के साथ-साथ डॉ. लोहिया पूरी तरह से कांग्रेस के युद्ध विरोधी अभियान तथा भारत की आजादी की लड़ाई तेज करने के प्रचार कार्य में लग गये। उन्होंने युद्ध विरोधी संगठन स्थापित किया। फौजी भरती

का विरोध करने के लिए जगह-जगह समितियों का गठन किया। उन्होंने जगह-जगह सभाओं में युद्ध के विरोध में आग उगलनी शुरू की। परिणाम स्वरूप वह 24 मई, 1929 को कलकत्ता में गिरफ्तार कर लिये गये। उन पर मुकदमा चला। डॉ. लोहिया ने अपने मुकदमे में खुद बहस की और 24 जून, 1939 को मजिस्ट्रेट ने उन्हें निरपराध घोषित कर छोड़ दिया।

प्रताड़नाएं

20 मई 1944 में कलकत्ता से गिरफ्तारी के बाद डॉ. लोहिया को लाहौर किले की एक अंधेरी कोठरी में रखा गया। (इसी किले की एक अन्य कोठरी में जयप्रकाश नारायण भी थे)।

हर समय उन्हें भारी हथकड़ियां पहनायी जाती थीं। जेलवाले उन्हें खामखां कोठरी से जेल के दफ्तर तक ले जाते और घंटों खड़ा रखते या कुर्सी पर बैठा कर रखते।

उन्हें सोने नहीं दिया जाता था। लेटने नहीं दिया जाता था। बैठे-बैठे सो न जाएं इसीलिए आंखें खुली रखने पर मजबूर किया जाता था। पलक ज्यादा देर तक न झपकती तो दरोगा हथकड़ियों को जोर से झटका देता या मेंज पर

डंडा पटकता।

डॉ. लोहिया के सामने राष्ट्रीय नेताओं को गंदी-गंदी गालियां दी जातीं। उन्हें फर्श पर गिराकर टांग पकड़ कर गोल-गोल घुमाया जाता। यातना देने वाला दरोगा वही था जिसने 14 वर्ष पूर्व इसी किले में भगत सिंह को यातनाएं दी थीं। एक कपड़े में मुर्गी बांधकर वहां लटकायी जाती। मुर्गी दिन भर कुड़कुड़ाती रहती और शाम तक शांत हो जाती।

डॉ. लोहिया को हफ्तों नहाने नहीं दिया गया। चार महीने तक पेस्ट-ब्रश या दांतौन नहीं दी गयी। उन्होंने मिट्टी, कोयले से दांत मांजे। उनसे एक ही सवाल बार-बार पूछा जाता। 1945 में आगरा जेल में स्थानांतरण के बाद ही यातानाओं का क्रम रुका। यहीं से 11 अप्रैल 1946 को वह रिहा हुए।

कांग्रेस रेडिया का संचालन

भूमिगत जीवन में डॉ. लोहिया 'बाढ़ियाजी' के नाम से जाने जाते थे। कलकत्ता की एक धनी बस्ती में जिस मित्र के घर में वह मेहमान के रूप में रहते थे वहां एक बड़े विदेशी सेठ के लड़के के नाम से प्रसिद्ध थे।

अपने कलकत्ता प्रवास के दौरान डॉ. लोहिया ने दो भूमिगत रेडियो

ट्रान्समिशन केन्द्र बनाए जो 'कांग्रेस रेडिया' के नाम से प्रसारण करते थे। वो प्रसारण पूरे देश में लगन के साथ सुने जाते थे। उनमें कहा जाता था, ''यह कांग्रेस रेडिया है। हम देश के किसी कोने से बोल रहे हैं। आजादी के लिए लड़ने वालों के नाम संदेश सुनिये।'' संदेश के आलेख को डॉ. लोहिया ही बनाते थे। सरकार ने इस भूमिगत तंत्र का पता लगा लिया। पर डॉ. लोहिया पुलिस के चंगुल से निकल भागे। पूरा ट्रान्समिटर साथ लिए वह नेपाल पहुंचे। वहां जंगलों में उन्होंने उसे फिर लगाया और वहां से कांग्रेस रेडिया का संदेश प्रसारित करने लगे। सरकार ने डॉ. लोहिया की गिरफ्तारी पर पुरस्कार घोषित कर दिया।

हजारीबाग की जेल से भागकर जयप्रकाश नारायण पहले से ही नेपाल पहुंच चुके थे। जयप्रकाश नारायण वहां 'आजाद दस्ता' के नाम से आंदोलन चला रहे थे। अंग्रेजी सरकार का खुफिया विभाग टोह लगाते-लगाते नेपाल भी पहुंच गया। उन दिनों यह लोग बराह के पहाड़ी टीले पर रहते थे। इनके साथ अच्युत पटवर्धन की बेटी विजया भी रहती थी। पुलिस ने इन सबको एक दिन छापा मार कर पकड़ लिया और हनुमाननगर की जेल में बंद कर दिया। यह खबर पाकर 'आजाद दस्ता' के मुख्य संचालक सूरज नारायण सिंह ने हनुमाननगर की जेल पर हमला कर दिया। वहां से निकलकर ये लोग किसी तरह भागे। रास्ते में डॉ. लोहिया का चश्मा टूट गया और वह घायल भी हो गये। कुछ लोगों ने उन्हें घोड़े पर बैठाया और अज्ञात स्थान पर ले जाने में सफल हो गये। जयप्रकाश नारायण को तो कुछ लोगों ने अपनी पीठ पर

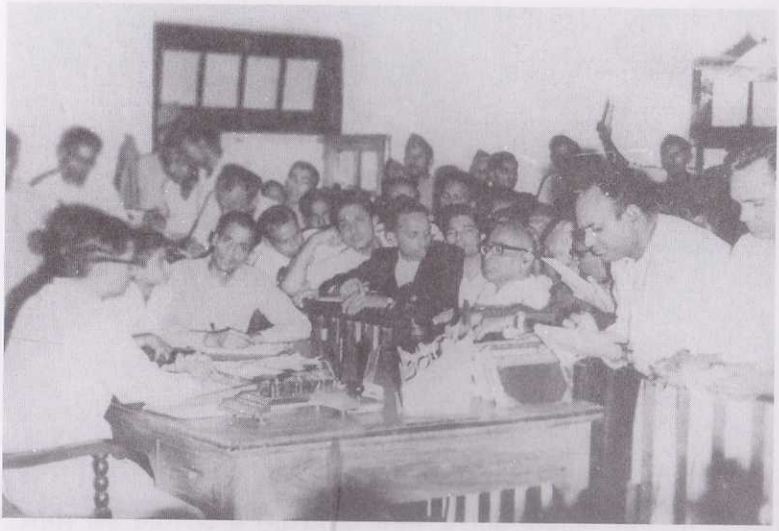

बैठा लिया और जंगल के बीच से भागते हुए बच निकले। हताश होकर पुलिस वापस लौट गयी। पर मझारी घाट पहुंचने पर पुलिस ने इन लोगों को पुनः घेरना चाहा लेकिन सूरज नारायण सिंह की कुशलता ये लोग फिर पुलिस के चंगुल से बच निकले। ये लोग राधापुर पहुंचे। डॉ. लोहिया राधापुर से कलकत्ता के लिए रवाना हो गये।

इस बीच देश में पूरा आंदोलन ठप पड़ गया था। गांधीजी की धर्मपत्नी कस्तूरबा गांधी की मृत्यु हो चुकी थी। महादेव भाई का भी निधन हो चुका था। गांधीजी के 21 दिन के उपवास का भी कोई असर नहीं दिखा रहा था। जो लोग भूमिगत जीवन बिता रहे थे उनके सामने एक बहुत बड़ी समस्या थी कि इस निराशा की हालत से देश को कैसे निकाला जाये। बहुत प्रयास करने के बाद ऐसी स्थिति पैदा की जा सकी कि सारे भूमिगत लोग मुम्बई में मिलें। डॉ. लोहिया भी कलकत्ता से मुम्बई पहुंचे। यह 20 मई, 1944 का दिन था। भूमिगत लोगों की बैठक चल रही थी। खबर मिली कि बैठक स्थल को पुलिस ने घेर रखा है। कुछ लोग तो भाग निकले लेकिन डॉ. लोहिया पकड़ लिये गये। पुलिस उन्हें लाहौर जेल ले गयी। लाहौर जेल में उनको बड़ी कठोर यातनाएं दी गयीं।

डॉ. लोहिया ने 'इंटरनल ड्यूरिंग पालिटिक्स' नामक पुस्तक में इस यातना का वर्णन किया है। वहां उन्हें सबसे अधिक अमानवीय पद्धतियों की क्रूरतम यातनाएं दी गयीं।

सन् 1945 में डॉ. लोहिया ने हाईकोर्ट में 'हेबियस कार्पस' के अंतर्गत अपनी गिरफ्तारी के विरुद्ध मामला दायर किया। मामले की सुनवाई के लिए उन्हें लाहौर जेल से आगरा जेल भेज दिया गया। लाहौर जेल की यातनाओं से डॉ. लोहिया मुक्ति तो मिल गई, लेकिन तब तक उनका स्वास्थ्य काफी गिर चुका था। फिर भी वह मन से दृढ़-प्रतिज्ञ थे।

गांधी, नेहरू और लोहिया

राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं पर पं. नेहरू से उनके मतभेद निरंतर बढ़ते ही गये। डॉ. लोहिया और पं. नेहरू के विचारों में अलगाव उस समय और प्रखर हो गया, जब 5 अक्टूबर, 1939 को डॉ. लोहिया ने कहा, ''ब्रिटेन को सहायता देने का प्रश्न हिन्दुस्तान को आजादी मिलने के बाद ही उपस्थित हो सकता है। ब्रिटेन को युद्ध में सहयोग देने से अपने आप आजादी मिलेगी यह भ्रम दूर होना चाहिए।'' कांग्रेस कमेटी में जब इस सवाल पर विचार हुआ तो पं. नेहरू का ब्रिटेन से समझौतावादी प्रस्ताव नहीं माना गया। पं. नेहरू को पहली बार यह अनुभव हुआ कि डॉ. लोहिया से उनके आधिपत्य को खतरा पैदा हो सकता है।

गांधीजी और वायसराय के बीच चल रही वार्ता के भी डॉ. लोहिया खिलाफ थे। वह जानते थे कि इन बातों का कोई परिणाम नहीं निकलेगा। उन्होंने पं. नेहरू के उन नरम प्रस्तावों का भी विरोध किया था जिनके आधार पर कांग्रेस और गांधीजी वायसराय से बातचीत कर रहे थे। पहले तो डॉ. लोहिया की बातों को गम्भीरता से नहीं लिया गया परंतु जब अंग्रेजों ने स्वयं उन प्रस्तावों को अस्वीकार कर दिया, तब डॉ. लोहिया की बात लोगों की समझ में आई। फलस्वरूप कांग्रेस कमेटी को निश्चित निर्देश देना पड़ा कि जहां-जहां प्रदेश में कांग्रेसी सरकार है वह त्यागपत्र दे। 31 अक्टूबर तक सात प्रांतों की कांग्रेस सरकारों ने त्यागपत्र दे दिये और वहां गवर्नर का शासन लागू

हो गया।

डॉ. लोहिया अकेले व्यक्ति थे जो उन दिनों गांधीजी के विचारों के अनुसार युद्ध का खुलकर विरोध कर रहे थे। गांधीजी के विचारों पर आधारित उन्होंने कई कमेटियां बनाई थीं। उनके विचारोत्तेजक लेख देश के लाखों लोगों द्वारा तो पढ़े ही जा रहे थे। उनका संज्ञान अंग्रेजी सरकार भी ले रही थी। वह कहते थे कि इस वक्त अंग्रेजों के प्रति किसी प्रकार की नरमी नहीं दिखानी चाहिए।

सुल्तानपुर की दोस्तपुर तहसील में एक राजनैतिक सम्मेलन 11 मई, 1940 को आयोजित किया। डॉ. लोहिया इस राजनैतिक सम्मेलन के अध्यक्ष थे। अपने अध्यक्षीय भाषण में उन्होंने कहा, ''दुनिया की अन्य जातियों के शोषण और गुलामी पर आधारित ब्रिटिश सरकार एवं साम्राज्य विशाल इमारत लड़खड़ा रही है। अंग्रेजों द्वारा तैयार किये गये इसके विशाल खेमे अब गिरकर इसे चकनाचूर होने से बचा नहीं सकते।''

डॉ. लोहिया के इस भाषण पर अंग्रेजी सरकार ने उन्हें 7 जून, 1940 को अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के कार्यालय से गिरफ्तार कर लिया। 15 सितम्बर, 1940 को मुम्बई में आयोजित अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की

सभा में गांधीजी ने स्पष्ट शब्दों में कहा, ''जब तक डॉ. राममनोहर लोहिया और जयप्रकाश नारायण जेल में हैं तब तक मैं खामोश नहीं बैठ सकता। उनसे अधिक शूर और सरल आदमी मुझे मालूम नहीं।'' 4 दिसम्बर, 1941 को डॉ. लोहिया, जयप्रकाश नारायण व आचार्य नरेन्द्रदेव आदि रिहा कर दिये गये। मार्च-अप्रैल, 1942 में क्रिप्स मिशन भारत आया किन्तु वार्ता असफल हो गयी। लेकिन इस वार्ता में पं. नेहरू की जो पूरी तस्वीर डॉ. लोहिया के मन में बनी वह अच्छी नहीं थी। इसी बीच अल्मोड़ा के एक सम्मेलन में पं. नेहरू की आलोचना करते हुए डॉ. लोहिया ने कहा, ''नेहरू झट से पलटने वाले नट हैं।'' पं. नेहरू को चेतावनी देते हुए उन्होंने कहा कि देश को उनसे बड़ी आशाएं हैं। उन्हें सोच समझकर निर्णय लेना चाहिए। उस समय पं. नेहरू के खिलाफ इतना भी कहने का साहस कांग्रेस के किसी सदस्य में नहीं था।

डॉ. लोहिया कभी-कभी गांधीजी की धीमी गति से बेचैन हो जाते थे। 8 अप्रैल, 1942 को उन्होंने 'भारत छोड़ो' प्रस्ताव पर बोलते हुए कहा, ''ब्रिटिश राष्ट्र वैसा अजेय राष्ट्र नहीं है जैसा आज तक माना जाता था। ब्रिटिश साम्राज्य के अधीन देशों में भी ब्रिटेन का डर नहीं है। हिन्दुस्तान के बारे में ब्रिटेन ने जो रास्ता अपनाया है उसके कारण उनके खिलाफ भारतीयों में असंतोष दिन ब दिन बढ़ता जा रहा है।''

'भारत छोड़ो' प्रस्ताव के पास होने के पश्चात अंग्रेजों ने प्रायः सभी कांग्रेस नेताओं को गिरफ्तार किया लेकिन डॉ. लोहिया भूमिगत हो गये। 8 अगस्त, 1942 को भूमिगत होने के बाद से लेकर 1946 तक उनका जीवन बड़ा संघर्षपूर्ण रहा। गांधीजी ने अपने भाषणों में दो बातें कही थीं, पहली करो या मरो और दूसरी प्रत्येक नागरिक अपनी तरफ से ब्रिटिश साम्राज्य से संघर्ष करे। गांधीजी की इन दोनों बातों के आधार पर डॉ. लोहिया स्वतंत्र रूप से स्वतंत्रता आंदोलन चलाना चाहते थे। सन् 1942 के आंदोलन को डॉ. लोहिया ने आजादी की आखिरी लड़ाई के रूप में स्वीकार किया था। इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए उन्होंने भूमिगत होने के बाद ही 'जंगजू आगे बढ़ो' नामक पुस्तिका लिखी। अभी यह पुस्तिका बंटी ही थी कि डॉ. लोहिया ने दूसरी

पुस्तिका 'मैं आजाद हूं' लिखी। उन्होंने तीसरी पुस्तिका 'करो या मरो' भी भूमिगत जीवन में ही लिखी। 8 अगस्त के बाद कांग्रेस नेताओं के जेल चले जाने से सभी किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो गये थे। डॉ. लोहिया की इन तीनों पुस्तिकाओं से जनता में फिर से 'करो या मरो' की एक नई चेतना प्रवाहित हो गयी।

नियम तोड़ना डॉ. लोहिया ने गांधीजी से सीखा था। पर नियम भंग में भी दोनों में अंतर था। नियम भंग कर के भी गांधी नियम को पसंद करते थे पर डॉ. लोहिया को नियम के अस्तित्व से ही नफरत थी। गांधीजी की नियम भंग नीति थी, डॉ. लोहिया का चरित्र। पर जिन नियमों को डॉ. लोहिया ने स्वीकार किया, जान पर खेल कर भी उनकी रक्षा की।

1920 में जब गांधीजी मुम्बई आये तो हरिलाल अपने पुत्र राममनोहर को लेकर उनके पास पहुंचे। डॉ. लोहिया ने तब पहली बार गांधीजी को देखा और उनके चरण स्पर्श किये। गांधीजी ने उनकी पीठ थपथपाई।

कांग्रेस के भीतर 'बड़ों ' का एक अपना गुट था। जो अपने आगे किसी को महत्व नहीं देते थे। पर बौद्धिक स्तर पर गांधीजी को छोड़कर सब डॉ. लोहिया से दबते थे।

डॉ. लोहिया ने गांधीजी के पत्र 'हरिजन' में 1 जून के अंक में लेख लिखा 'सत्याग्रह तुरंत'। उसी अंक में गांधीजी ने दूसरा लेख लिखा 'सत्याग्रह अभी नहीं'। डॉ. लोहिया को गांधीजी की बात मानकर ही चुप रहना पड़ा। वास्तविकता यह थी कि कांग्रेस की सामूहिक शक्ति से गांधीजी की अकेली शक्ति बहुत ज्यादा थी।

डॉ. लोहिया की दूसरी बार गिरफ्तारी के बाद मुम्बई कांग्रेस कमेटी की बैठक में गांधीजी ने कहा—जब तक डॉ. लोहिया जेल में हैं, तब तक मैं खामोश नहीं बैठ सकता। उनसे ज्यादा बहादुर और भला आदमी मुझे नहीं मालूम, उन्होंने हिंसा का प्रचार नहीं किया। जो कुछ किया, उससे उनका सम्मान और बढ़ता है।

अप्रैल 1942 में डॉ. लोहिया वर्धा जाकर गांधीजी के साथ एक सप्ताह रहे और उन्हें लड़ाई शुरू करने को राजी करते रहे। अंततः गांधीजी ने कहा,

अभी तक मैं ब्रिटेन से सहानभूति रखता था लेकिन आज मेरा मन इस नैतिक समर्थन से भी इनकार करता है। बाद में गांधीजी ने 'भारत छोड़ो' और 'अहिंसात्मक असहयोग' की भी भूमिका प्रस्तुत की।

14 अगस्त 1946 को 'हरिजन' में महात्मा गांधी ने गोवा के गर्वनर के पत्र का उत्तर देते हुए लिखा— डॉ. लोहिया की राजनीति शायद मुझसे भिन्न हो सकती है, लेकिन उन्होंने गोवा जाकर उधर की कलंकमय जगह पर अपनी उंगली रखी है। इसी कारण मैं उनकी तारीफ करता हूं, गोवा के नागरिक शेष हिन्दुस्तान के आजाद होने तक प्रतीक्षा कर सकते हैं। लेकिन कोई भी व्यक्ति या गुट स्वाभिमान शून्य हुए बिना नागरिक स्वातंत्र्य के अभाव में नहीं रुक सकता। उन्होंने जो मशाल प्रज्वलित की है उसे गोवा के नागरिक अगर बुझ जाने देंगे तो उनके लिए बहुत बड़ा खतरा होगा। आप और गोवा के नागरिक दोनों को ही डॉ. लोहिया को बधाई देनी चाहिए कि उन्होंने यह मशाल जलायी।

दोबारा गोवा जाने पर 29 सितम्बर को डॉ. लोहिया को कोलम टीसन में गिरफ्तार किया गया। अगवाद के किले में तन्हां रखा गया। 8 अक्टूबर को उन्हें अचानक रिहा कर दिया गया। इसके पीछे महात्मा गांधी का प्रयास था। तब दिल्ली में अंतरिम सरकार थी। गांधीजी ने पं. नेहरू को सरकारी स्तर पर डॉ. लोहिया की रिहाई के लिए प्रयास करने को कहा। पं. नेहरू ने असमर्थता जतायी तो गांधीजी ने स्वयं तत्कालीन वायसराय लार्ड बेवेल को लिखा। उन्होंने एक सभा में भी वायसराय से डॉ. लोहिया की रिहाई के लिए पुर्तगाल सरकार पर दबाव डालने को कहा। वायसराय के हस्तक्षेप से गोवा के एक पादरी के माध्यम से डॉ. लोहिया की रिहाई हुई। गांधीजी ने डॉ. लोहिया द्वारा गोवा के प्रधान न्यायमूर्ति को लिखे पत्र को भी छापा और समर्थन में टिप्पणी भी लिखी। इस सबका परिणाम यह हुआ कि लोगों ने गोवा को फल, मक्खन व मांस के लिए मवेशियों की सप्लाई रोक दी। लोग संगठित हुए। महिलाओं ने लोक गीतों में डॉ. लोहिया का नाम जोड़ लिया।

सन् 1962 में चीन के हमले से डॉ. लोहिया उद्विग्न हो उठे थे। उन्होंने लोकसभा में कहा था, ''चीन ने हमारे देश पर हमला कर हमारी जमीन पर

कब्जा किया हुआ है फिर भी भारत राष्ट्र संघ में चीन की सदस्यता के लिए पैरवी करता है। कोई लाडला अपनी मां के बलात्कारी के साथ अपनी मां का विवाह करवाने की इच्छा करे, यह बेशर्मी की बात है।'' डॉ. लोहिया की इस आलोचना ने पूरी संसद को हिला दिया था। गुलजारीलाल नन्दा ने जो उस समय योजना मंत्री थे, डॉ. लोहिया की बहस का जवाब दिया। फिर डॉ. लोहिया ने नन्दा की बहस का उत्तर देते हुए कहा, ''यूपी जैसे गरीब प्रदेश का यह दुर्भाग्य है कि मुझ जैसा निकम्मा आदमी और प्रधानमंत्री जैसा अज्ञानी आदमी यहां इस प्रदेश का प्रतिनिधित्व करते हैं।''

विरोधाभास

डॉ. लोहिया भीड़ के नेता नहीं थे पर सबसे अधिक भीड़ खींचते थे। वह भीड़ को पुचकारते नहीं उससे जूझते थे। सारे जीवन उपेक्षा, उपहास, अपमान झेला। अखबारों ने उनकी बात को कभी ठीक अर्थों में नहीं छापा या वे उन्हें समझ ही नहीं पाये। उन्हें बहुत बाद तक स्पष्टीकरण देते रहना पड़ता था।

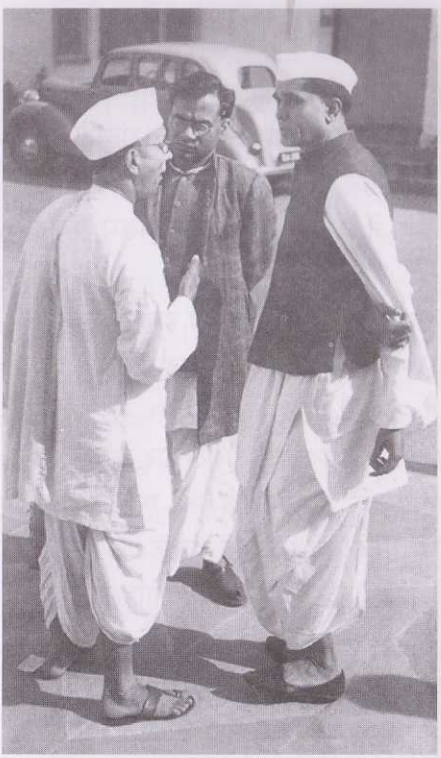

वह स्पष्ट और निश्छल स्वभाव के थे। पर उनसे नाराज होनेवाले बहुत लोग थे। हालांकि उन्होंने नाराज होनेवालों की कभी चिंता नहीं की।

डॉ. लोहिया औरतों को गुड़िया या भोग की वस्तु

मानने को तैयार नहीं थे। वह रामराज की जगह सीता राज की बात कहते थे पर उन्होंने विवाह की बात भी नहीं सोची। बल्कि उन्होंने उन सेठ जमनालाल बजाज का साथ छोड़ दिया जिन्होंने गांधी जी के कहने पर डॉ. लोहिया को प्रश्रय दिया था। बजाज अपनी बेटी की शादी डॉ. लोहिया से करना चाहते थे। डॉ. लोहिया ने कहा, मुझे शादी करके घर नहीं बसाना। मुझे और भी बड़े-बड़े काम करने हैं।

उनकी अंग्रेजी में बहुत रुचि थी। फर्राटे से अंग्रेजी बोलते थे लेकिन आगे की पढ़ाई के लिए लंदन जाने के बारे में वह कहते थे जो देश हमारे देश पर हुकूमत करे उस देश में शिक्षा लेने से हमारी मानसिक गुलामी बढ़ेगी। बर्लिन में वह चेन स्मोकर हो गये थे, घर में एक मित्र की दयनीय दशा देखकर उन्होंने सिगरेट छोड़ दी थी।

पिता का स्वर्गवास

सन् 1945 में अचानक ब्रिटिश सरकार ने 1942 के बंदियों की आम रिहाई का आदेश दिया। यह आशा थी कि इस आम रिहाई के अंतर्गत डॉ. लोहिया भी जेल से छोड़ दिये जायेंगे लेकिन डॉ. लोहिया को उस समय भी नहीं रिहा किया गया। ब्रिटिश शासन ने उनको भारत का सबसे ज्यादा खतरनाक व्यक्ति माना था।

इसी बीच डॉ. लोहिया के पिता श्री हीरालाल बीमारी की हालत में अपने पुत्र डॉ. लोहिया से मिलने आगरा जेल गये। आगरा से वापस जाने के थोड़े ही दिन बाद उनका स्वास्थ्य और भी खराब हो गया। ब्रिटिश सरकार ने मरणासन्न पिता से मिलने के लिए डॉ. लोहिया को पैराल पर छोड़ने का फैसला किया। डॉ. लोहिया ने सरकार के इस फैसले को स्वीकार नहीं किया। उन्हें जेल में सूचना मिली कि पिता की मृत्यु हो गई है। सरकार ने फिर जेल से पैराल पर जाने का आदेश जारी किया। परंतु डॉ. लोहिया ने उसे भी ठुकरा दिया।

देश स्वतंत्र हुआ किन्तु यह स्वतंत्रता विभाजन के बाद प्राप्त हुई। डॉ. लोहिया देश के विभाजन के विरुद्ध थे परंतु वह कर क्या सकते थे। कांग्रेस

सरकार की गलत नीतियों ने डॉ. राममनोहर लोहिया को झकझोर डाला। वह सभी गैर कांग्रेसी दलों के समान कार्यक्रम को लेकर एकजुट होने के समर्थक रहे। 'राजनीति छुआछूत' को वह घातक व जनतंत्र विरोधी मानते थे।

अपनी इस सोच के अंतर्गत उन्होंने सन् 1963 में हुए लोकसभा के उपचुनाव में जौनपुर क्षेत्र के जनसंघ प्रत्याशी दीनदयाल उपाध्याय तथा अमरोहा से खड़े हुए आचार्य जे.बी. कृपलानी का समर्थन कर नया आदर्श स्थापित किया। डॉ. लोहिया फर्रुखाबाद से लोकसभा के लिए खड़े हुए और कांग्रेस व प्रजा सोशलिस्ट पार्टी के प्रत्याशियों को बुरी तरह हराया।

डॉ. लोहिया को लगा कि यदि तमाम विरोधी पार्टियां तालमेल कर न्यूनतम कार्यक्रम पर समझौता करके चुनाव लड़ें तो कांग्रेस को निश्चय ही हराया जा सकता है। गैर कांग्रेसवाद का बीजारोपण उनके मन में यहीं से हुआ।

लोग समझते थे कि डॉ. लोहिया के संसद में पहुंच जाने से संसद के काम में रोड़े ज्यादा अटकेंगे और काम कम होगा, लेकिन अपने अल्पकालीन संसदीय जीवन में डॉ. लोहिया ने रचनात्मक बहसों और तर्कों से संसद का ही नहीं पूरे देश का मन मोह लिया। भारतीय संसदीय जीवन के 15 वर्षों में पहली बार संसद में सरकार के विरुद्ध 21 अगस्त, 1963 को अविश्वास का प्रस्ताव रखा गया। अविश्वास प्रस्ताव पर बोलते हुए डॉ. लोहिया ने कहा, ''60 प्रतिशत कुटुम्ब 25 रुपये प्रति माह यानि 26 करोड़ आदमी तीन आने रोज पर अपना जीवन निर्वाह करते हैं जबकि प्रधानमंत्री के कुत्ते पर तीन रुपये रोज खर्च होते हैं। खेत मजदूर 12 आने रोज कमाता है और प्रधानमंत्री के ऊपर 25 हजार रुपये प्रतिदिन खर्च होते हैं।''

डॉ. लोहिया की तीन आने रोज आमदनी वाली बात से पूरे देश में खलबली मच गयी। प्रधानमंत्री नेहरू ने डॉ. लोहिया के आंकड़ों को गलत बताया तो डॉ. लोहिया ने चुनौती दी कि यदि उनके आंकड़े गलत साबित हो जायें तो वह राजनीति से संन्यास ले लेंगे अन्यथा प्रधानमंत्री को त्यागपत्र देना होगा। लोकसभा में इस विषय पर एक सप्ताह तक बहस चली, और अन्त में

डॉ. लोहिया की विजय हुई।

मृत्यु

30 सितम्बर, 1967 को लोहिया की पौरुष ग्रंथि का आपरेशन हुआ। पर आपरेशन बिगड़ गया। तमाम नेता और लोहिया को चाहने वाले विलिंग्डन अस्पताल में आते-जाते रहे। करीब 2 हजार लोग तो वहां के मैदान में हर वक्त जमे रहते थे। देश विदेश के अनेक डाक्टरों ने लोहिया को देखा। उनकी पौरुष ग्रंथि के आपरेशन में बहुत रक्त बह गया था। रक्तस्राव रुक नहीं रहा था। पता चला कि लोहिया को प्रोस्टेट का कैंसर है। लोहिया अक्सर बेहोश रहते थे। जब होश आता तो चीखते—किसानों का क्या होगा, लगान का क्या होगा, हिन्दी का क्या होगा। मेरे लिए इतने डाक्टर और करोड़ों के लिए एक भी नहीं। बड़े काम करने हैं, एक अकेला क्या कर सकता है।

लोहिया की हालत में कभी सुधार होता, पर फिर गिरावट आ जाती। इस तरह 11 अक्टूबर आ गयी। और 12 अक्टूबर को 1 बजकर 5 मिनट पर लोहिया ने आखिरी सांस ली। यह नवरात्रि की नौवीं थी। 57 साल का संघर्षमय जीवन समाप्त हो गया।

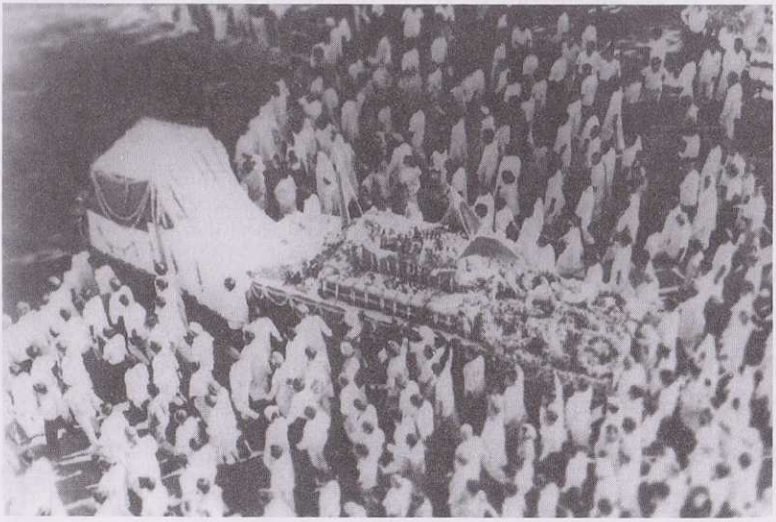

लोहिया उवाच

'मतदाता को चाहिए कि वह तवे के ऊपर जैसे रोटी उलटी-पुलटी जाती है इसी तरह सरकारों को भी उलटता-पुलटता रहे ताकि वो यथास्थितिवादी न हों।'

'जिन्दा कौमें पांच साल तक खामोश नहीं बैठतीं। वह या तो सरकारों को शुद्ध करती हैं या उन्हें हटाती हैं।'

'जनतंत्र का मतलब है लोकसभा, लोकसभा का अर्थ है बहस और तर्क। बहस का अर्थ है सच्चाई यानी जिस तरह तोलते समय बाटों का वजन बदलना अपराध है उसी तरह तर्क के अर्थ को अपनी सुविधा के अनुसार बदलना, स्वीकार करना, झुठलाना भी अपराध मानना चाहिए। जहां सच नहीं है वहां बहस नहीं हो सकती। जहां बहस नहीं है वहां लोकसभा नहीं है। जहां लोकसभा नहीं है वहां प्रजातंत्र नहीं हो सकता।'

'जनतंत्र के लिए आज्ञाकारिता भी खतरनाक है और अवज्ञा भी। आज देश में जहां अवज्ञा है वहां आज्ञाकारिता बढ़ गई और जहां आज्ञाकारिता है वहां अवज्ञा। कानून में मात्रा भेद आवश्यक है।'

'जिस एक अंग्रेजी शब्द ने हमारा बड़ा नुकसान किया है और वह है सेक्यूलरिज्म। सेक्यूलरिज्म का अर्थ बहुत कम लोग जानते हैं। धर्मनिरपेक्ष जिसे कहते हैं वह तो इसका बड़ा छोटा-सा अर्थ है। सेक्यूलरिज्म का अर्थ है इहलोकवादी।'

'भारत सरकार शरीर के हिसाब से अमरीका की हो गयी है और मन के हिसाब से रूस की। जब शरीर और मन अलग-अलग हो जाया करते हैं तो शरीर ज्यादा महत्पवूर्ण रहता है। भारत सरकार को आत्मसम्मान के साथ अपनी एक नीति ऐसी बनानी चाहिए जो अपने राष्ट्र तथा यहां की जनता के

हितों को सर्वोपरि महत्व देती हो।'

'इस व्यवस्था को बदलो, वरना देश जहन्नुम में चला जायेगा। सत्ता का विकेन्द्रीकरण करो, चौखम्भा राज की स्थापना करो, तभी देश का निर्माण किया जा सकता है। तभी भूखे को खाना, बेकार को काम, खेत को पानी, अनपढ़ को शिक्षा और पिछड़े, दबे, कुचले, उदास मन को नई जिंदगी का संदेश मिल सकता है, जिससे वे उठें, बढ़ें और मुल्क को इसकी आत्मा को तथा देश के आत्मसम्मान को बचा सकें।'

'भारत को एक करने वाली दो शक्तियां हैं—एक गांधी और दूसरी फिल्म।'

'सामयिक यश और ऐतिहासिक यश में बड़ा अंतर है। मान लो कि तुमको सामयिक यश न मिले सफलता न मिले लेकिन जरा अपनी निगाह दूर तक रखना। देखना कि शायद ऐतिहासिक यश मिल जाए यदि सिद्धांत के साथ चिपके रहो तो।'

'जो लोग मानते हैं कि कांग्रेस और सोशलिस्ट में सिर्फगति का फर्क है, वे गलती कर रहे हैं। भेद केवल रफ्तार का नहीं बल्कि दिशा का भी है।'

'ये लोग जो पढ़ रहे हैं। इन्हें तो आई.सी.एस. बनना है। सरकारी अफसर होना है। पर हमें तुम्हें तो दुनिया का बहुत बड़ा आदमी बनना है।'

'जीवन के दो पहलू हैं—ईश्वर और औरत। मेरी ईश्वर से कभी भेंट नहीं हुई और औरत छल और माया है। लेकिन मुझे एक ऐसा व्यक्ति मिला जिसमें सत्य और सौन्दर्य की प्यास थी पर वह भी चला गया। अब प्यास नये ढंग से जागी है—धुधंली सी आशा है कि ऐसा व्यक्ति बनेगा ... राह चमकेगी।'

'समाजवाद, आजादी, अहिंसा में जो सत्य निहित है वही इस शताब्दी की एक मात्र महान देन है।'

'सामाजिक अन्याय को प्रतिकार के लिए गांधी की देन मार्क्स की देन से बड़ी है।'

'साम्यवाद=समाजवाद+तानाशाही+रूस+युद्ध-आजादी।'

✦✦✦

ISBN : 978-81-929878-6-6

श्री अग्रसेन फाउंडेशन
83, मॉडल बस्ती, करोल बाग, नई दिल्ली-110005
दूरभाष : 011-23633333, 23510630
E-mail : agroha@gmail.com
Website : www.allagrawal.org